गीता के आलोक में निष्काम कर्मयोग

डॉ. दीपक कुमार सिंह

सहायक आचार्य, शिक्षा संकाय
गुरुप्रकाश बी0एड0 कालेज, केकढ़ा
कैमूर, बिहार

गीता में निष्काम कर्मयोग

निष्काम का अर्थ है वैयक्तिक कामना से नहीं बल्कि विश्वात्मा जो हमारी आत्मा का उच्चपद है, की कामना से कर्म करना, भगवद् कर्म का सफल यन्त्र बनना है। कर्म का अर्थ अपने–अपने वर्ण के अनुसार अथवा स्वभाव और शक्ति के अनुसार देव, गुरू और पितरों के प्रति अपने कर्तव्य करना है। गीता ने वर्णाश्रम के धर्म को नम नहीं वरन् स्वभाव के आधार पर माना है। इस अर्थ में यह नियम आज के लिए भी अधिक वैज्ञानिक प्रतीत होता है। श्रम–विभाजन को गीता ने दैवी स्वीकृति प्रदान की है।

लोकमान्य तिलक का कहना है गीता में कर्म करने का उपदेश है पर यह कर्म सामान्य कर्म न होकर निष्काम कर्म है। निष्काम कर्म का मतलब कामना रहित अर्थात् तटस्थ होकर भगवान की इच्छा के अनुसार कर्म करना है। भगवान की इच्छानुसार कर्म भगवान से तादात्म्य की ही दशा में हो सकता है। अतएव निष्काम कर्मयोग का अर्थ ''ईश्वर से तादात्म्य करके उसके हाथ के सफलकर्मी यन्त्र बनकर काम करना है।'' ऐसा करने से कर्म का बन्धन न होगा। लेकिन यह स्थिति केवल कर्म करने से संभव नहीं है। भक्ति तथा आत्म–समर्पण के अभाव में ईश्वर के साथ सम्बन्ध बनाना असंभव है। पूर्ण सर्वांगीण तन्मयता में बुद्धि का भी योगदान आवश्यक है, इसलिए ज्ञान को भी छोड़ा नहीं जा सकता। इस प्रकार गीता में वर्णित स्थितप्रज्ञ की अवस्था तक पहुंचने के लिए ज्ञान, भक्ति और कर्म, विचार, भावना और संकल्प सभी का समन्वय करके ईश्वर से सम्बन्ध स्थापित करके अपने कर्मो को करते रहना आवश्यक है। यह कर्म के लिए नहीं बल्कि ईश्वर के लिए है, क्योंकि वर्ण–व्यवस्था तथा कर्मों को ईश्वर ने ही निर्धारित किया है। इस सर्वांगीण तादात्म्य से मानव का दैवी रूपान्तर होगा जिससे कि वह संसार में दैवी प्रयोजन को सिद्ध करने में सफल कर्म करने वाला बन सकेगा।

प्रो0 हिरियाना के शब्दों में, **''गीता का उद्देश्य प्रवृत्ति और निवृत्ति या कर्म तथा ज्ञान के दो आदर्शों में स्वर्णिम माध्यम मार्ग निकालना है। यही गीता के कर्मयोग का असली अर्थ है। निष्काम कर्मयोग ज्ञान, भक्ति और कर्म का ही आध्यात्मिक समन्वयन है। यह समन्वय इन तीनों पक्षों पर व्यावहारिक समझौता नहीं है। बौद्धिक प्रयत्नों से इसको नहीं समझा जा सकता। मात्र यही कहा जा सकता है कि इसमें संकल्प, विचार और भावना सभी एक रस, सभी रूपान्तरित तथा सभी दैवी हो जाते हैं।'' राधाकृष्णन् का कहना है कि ''कर्म–मार्ग (गीता का मुख्य उद्देश्य) हमें एक ऐसी अवस्था पर ले जाता है, जहां भावना, ज्ञान और संकल्प सभी उपस्थित होते हैं।''**

ब्रह्म विद्या तथा योगशास्त्र– गीता के प्रत्येक अध्याय की समाप्ति पर गीता को 'ब्रह्म विद्यायां योगशास्त्रे' यानी ब्रह्म–विद्या पर आधारित योग का शास्त्र कहा गया है। इसलिए गीता योगशास्त्र है। शास्त्र का मतलब किसी विषय का व्यवस्थित अध्ययन होता है। गीता में ज्ञान, भक्ति अथवा कर्म का नहीं बल्कि योग का व्यवस्थित अध्ययन किया गया है। इसलिए गीता का मुख्य उपदेश योग है। ब्रह्म विद्या या ज्ञान उसका आधार है जो कि आवश्यक है, लेकिन मुख्य नहीं है। इस प्रकार से गीता का नीतिशास्त्र ज्ञान पर निर्भर है।

'कर्म–सन्यास तथा कर्मयोग' की चर्चा ऊपर की जा चुकी है। अब हम यहाँ केवल निष्काम कर्मयोग पर ही विचार करेंगे। हम यह जानते हैं कि गीता का मुख्य उपदेश निष्काम कर्मयोग है। अब तक के विवेचन से निष्काम कर्मयोग का अर्थ एकदम स्पष्ट हो गया है। निष्काम का अर्थ है भगवद्–कर्म को सफल यंत्र बनाना, वैयक्तिक कामना से

नहीं बल्कि विश्व आत्मा की कामना से कर्म करना। निष्काम कर्मयोग मानव की शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक प्रकृति के अनुकूल है। उससे स्वार्थ और परार्थ, व्यक्ति तथा समाज, इहलोक और परलोक सभी का कल्याण साधन होता है। इस प्रकार गीता ने दैवी प्रज्ञा में स्थित एक ऐसे योगमय जीवन का उपदेश दिया है जिसमें अन्य सभी धर्मों को छोड़कर दैवी आदेश का यन्त्र बनकर जीवन बिताना ही एकमात्र धर्म बन जाता है। **श्री अरविन्द** के शब्दों में–

''गीता हमें कर्मों को कामना रहित होकर करना नहीं सिखाती बल्कि सर्व धर्मों को छोड़कर दैवी जीवन का अनुसरण करना, एकमात्र परम में शरण लेना सिखाती है और एक बुद्धि, एक रामकृष्ण और एक विवेकानन्द का दैवी कर्म उसके उपदेश से पूर्ण सामंजस्य में है।''

सभी तर्कों को देने के बाद कृष्ण ने अर्जुन को यही उपदेश दिया है कि सब धर्मों को छोड़कर मेरी शरण में आ जा। मैं तुझे सभी पापों से छुड़ा दूंगा। चिन्ता मत कर–

'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज।

अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।'

कृष्ण की अन्तर्यामी विश्वात्मा यही है। इसलिए गीता का प्रयोजन मानव का दैवी रूपान्तर करके उसे निष्काम कर्मयोग के द्वारा संसार में ईश्वर के कार्य का साधक बनाना है। गीता के उपदेश के बाद अर्जुन युद्ध करने के लिए तैयार हो गये थे। तिलक इस तथ्य की ओर संकेत करते हैं कि गीता के उपदेश के उपरान्त अर्जुन न तो सन्यासी होकर जंगल में चले गये थे और न भक्त बनकर कीर्तन आदि में लग गये थे, बल्कि वे कमर कस कर युद्ध के लिए तैयार हो गये थे। अतएव इससे तिलक इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि गीता का प्रयोजन ज्ञान या भक्ति न होकर कर्म है। पूरी गीता में कृष्ण ने कर्म करने का आदेश बार–बार दुहराया है। गीता में उपनिषदों से नवीन दृष्टिकोण उपस्थित किया है। यदि ज्ञान और भक्ति उसका तात्पर्य होता तो उपनिषदों से ही काम चल सकता था। गीता की नवीनता है उसका कर्म करने का आदेश। अतः गीता का मुख्य उपदेश कर्मयोग है।

गीता में कर्मों के अधिष्ठाता श्रीकृष्ण

निष्ठावान् कर्मयोगी के लिए कृष्ण ने जो परमोच्च स्थान निर्धारित किया है उसे जानकर सहज ही में गीता के कर्मरत मार्ग की फल–प्राप्ति का रहस्य समण में आ जाता है। कृष्ण ने कहा है ''प्रतिसिद्ध कर्म या विहित नित्य सभी कर्मों को जो भी व्यक्ति सर्वदा मुझमें आश्रित होकर करता है वह मेरी कृपा से शाश्वत और अव्यय पद को प्राप्त करता है।'

''सर्व कर्माण्यपि, सदा कुर्वाणो मद्व्यापाश्रयः।

मत्प्रसादाद–वाप्नोति शाश्वत पदम्व्ययम्।।''– गीता

एक अन्य स्थान में उन्होंने कहा है कि– ''सब कर्मों का फल मुझमें संन्यस्त करके अनन्य योग से मेरा ही ध्यान करते हुए जो मेरी उपासना करते हैं, हे पार्थ, मुझमें आश्रित अपने उन भक्तों को मैं शीघ्र ही इस मरणशील संसार सागर से पार कर देता हूँ।''

''ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्नस्यमत्परा।

अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते।।

तेषांमहं समुद्धर्ता मृत्युसंसार सागरात्।

भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम्।।'' – गीता

कर्मयोगी के परम कर्त्तव्य– यही गीता के कर्मयोग की विधि है तथा यही उसका फल भी है। यही कर्मयोग गीता मुख्य विषय है जिसको कि कृष्ण ने कहा है–

''इमं विवस्ते योग प्रोक्तवानहमव्ययम्।।'' – गीता

उसी कर्मयोग को कृष्ण ने अर्जुन से कहा और अर्जुन को यह सचेत भी किया कि वह प्रतिफल, प्रतिक्षण मेरा स्मरण करके धर्म युद्ध में लग जाय।

''तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्सर युध्य च।''– गीता

कर्मयोगी की अवस्था– गीता में कर्मयोग के नायक अर्जुन, कृष्ण का उपदेश पाकर अत्यधिक प्रभावित हुए इसका परिणाम हुआ कि जो पहले संकीर्ण सुख–दुःख के बन्धनों से जकड़ा हुआ था उसी के द्वारा अठारहवें अध्याय में कहा गया यह श्लोक गीता के कर्मवाद को कितने प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करता है।

''नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत।

स्थितोअस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव।।'' – गीता

मेरी विपरीत बुद्धि अब नष्ट हो चुकी है, पूर्वस्मृति जग चुकी है। हे अच्युत, तुम्हारे ही अनुग्रह से मुझे यह लाभ हुआ है। अब कर्त्तव्य के विषय में मेरे सब संदेह दूर हो चुके हैं, मैं स्थिर चित्त हो चुका हूँ। अब से मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि तुम्हारे उपदेश के अनुसार ही कर्मयोग में प्रवृत्त होऊंगा।

कृष्ण ने अर्जुन को कर्त्तव्यनिष्ठ रहने के लिए जो उपदेश दिया था उसको सुनकर अर्जुन के सब शोक, मोह नष्ट हो गये और स्थितप्रज्ञ होकर वह कर्त्तव्य का अनुसरण करने के लिए कटिबद्ध हो गये। भगवान श्री कृष्ण का अर्जुन के प्रति कहा गया यह सदुपदेश ही गीता का मर्म है। श्री कृष्ण का उद्देश्य था अर्जुन को कर्म पथ पर लाकर आरूढ़ करना।

गीता के कर्मयोग की श्रेष्ठता ही प्रधान बात है–कैसे?

कर्म से ही मोक्ष प्राप्ति सम्भव है–गीता में कर्म मार्ग पर प्रवृत्त होने वाले व्यक्ति के मन से अपने–पराये की भावना समूल नष्ट हो जाती है। गीता के कर्मयोगी के लिए इस प्रकार के अवरोध तो महान् लक्ष्य की प्राप्ति में सम्भव ही है। वह महान् तथा अन्तिम लक्ष्य है। गीता में यह मोक्ष प्राप्ति दो प्रकार से बताई गई है– 1– ज्ञान या कर्म सन्यास, 2– कर्मयोग या निष्काम कर्म हो।

इसमें दूसरा तरीका श्रेष्ठ है। गीता का कहना है कि कामय कर्म का अनुष्ठान करने से मोक्ष की उपलब्धि नहीं होती है। वह तो ऐसे निष्कान कर्म करने से प्राप्त होती है, जिसमें अपने व्यक्तिगत लाभ अथवा कल्याण का कोई स्वार्थ निहित न हो। इस निष्काम कर्म को गीता में यज्ञ कहा गया है–

''यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः।

तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसंगः समाचार।।'' – गीता

'यज्ञ के निमित्त किये गये कर्म के अतिरिक्त अन्य कर्मों से बँधता है। अतः हे अर्जुन आसक्ति से रहित होकर तू यज्ञ (निष्काम कर्म) के लिए ही कर्म कर।' इसलिए श्री कृष्ण ने अर्जुन के प्रति कहा है, 'हे अर्जुन, तू अनासक्त होकर निरन्तर कर्तव्ययुक्त कर्मों को करता जा। अनासक्त होकर कर्म करने वाला पुरुष परमात्मा को प्राप्त होता है।'

'तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।

असक्तो ह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पुरुषः।।' – गीता

कर्मों की यह श्रृंखला इतनी व्यापक तथा दृढ़ है कि उससे न केवल अर्जुन और उसकी भाँति असंख्य जीव बँधे हैं, बल्कि उसका अनुशासन कर्मों के अधिष्ठाता पर भी है। अपने अधिष्ठाता के ऊपर भी उसका शासन है। गीता की यह कर्तव्य महानता वास्तव में बड़ी ही सार्वभौम है। गीता का कर्म हमें यह नहीं बताता कि उपदेष्टा उससे मुक्त रहे, बल्कि वह भी इस कर्म श्रृंखला में बँधा हुआ है।

कृष्ण ने स्वयं कहा है 'यदि कदाचित् असावधानीवश मैं कार्य कर अनुसरण न करूँ तब हे अर्जुन, सब प्रकार के मनुष्य मेरे आचरण का अनुकरण करने लगेंगे और कर्मच्युत् होने से मेरी गणना वर्ण–संकरों में की जायेगी और मैं सारी प्रजा का विनाशक बन जाऊँगा।

उक्त कथन से ही गीता के कर्मयोग की महानता स्पष्ट हो जाती है। इसकी महानता का दूसरा कारण भी है।

गीता का यह कर्माचरण अपने लिए तो मोक्षदायक है ही दूसरे के लिए भी कल्याणकारी है। इससे लोकसंग्रह तथा लोककल्याण भी होता है। अतएव गीता के कर्मयोग का एक परार्थ दृष्टिकोण यह भी हुआ कि अपने लिए न सही, लोककल्याण के लिए कर्म करना चाहिए गीता में कहा है– ''**जनकादि ज्ञानीजन भी अनासक्त कर्माचरण से ही परम–सिद्धि को प्राप्त हुए हैं। इस परम–सिद्धि को प्राप्त करने तथा लोकसंग्रह को देखते हुए हे अर्जुन, तुझे भी कर्म करना चाहिए।**''

गीता के सम्बन्ध में गांधी जी ने लिखा है, ''मैं भगवद्गीता में ऐसी शक्ति पाता हूँ जो कि मुझे पर्वत पर उपदेश (ईसाई धर्म) में भी नहीं मिलती। जब निराशा मेरे सम्मुख उपस्थित होती है और नितान्त एकाकी में प्रकाश की एक किरण भी नहीं देख पाता जब मैं भगवद्गीता की ओर लौटता हूँ, मुझे यहां अथवा वहां एक श्लोक मिल जाता है और मैं तत्काल ही अत्यधिक दुःखों के बीच में मुस्कराने लगता हूँ।''

इस प्रकार गीता का महत्व विशेष है। महाभारत में गीता का वर्णन करने के पश्चात् महर्षि वेद व्यास ने अन्त में कहा है–

''गीता सुगता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्र विस्तरैः।

या स्वयं पद्मानाभस्य मुखपद्माद्विनिःसृता।।''

अर्थात् श्री गीता जी को भली प्रकार पढ़कर, अर्थ और भाव सहित अन्तःकरण में धारण कर लेना मुख्य कर्तव्य है जो कि स्वयं श्री पद्मनाभ विष्णु भगवान के मुखारविन्द से निकली हुई है, फिर अन्य शास्त्रों से क्या प्रयोजन है। पाश्चात्य–विद्वान् विलियम **वॉन हम्बोल्ट** ने गीता को ''किसी ज्ञात भाषा में उपस्थित गीतों में संभवतः सबसे अधिक सुन्दर और एकमात्र दार्शनिक गीत'' कहा है।''

सन्दर्भ

1. डॉ0 सत्यनारायण दूबे 'शरतेन्दु'– शिक्षा के नवीन दार्शनिक पृष्ठभूमि–2009
2. गीता दर्शन – खण्ड–1, रत्नाकर– 2018
3. गीता दर्शन– ओशो मार्च 2019
4. गीता दर्शन– स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती, 2012
5. गीता दर्शन– आचार्य पवित्र, 2012